साख्याभिमत प्रमाण

'प्रमेयसिद्धिः प्रमाणाद्धि'– अर्थात् प्रेमय की सिद्धि प्रमाण के द्वारा होती है। किसी भी वस्तु की सिद्धि के लिए लक्षण या प्रमाण की आवश्यकता होती है। वाचस्पति मिश्र कहते हैं कि 'प्रमाण वह चित्तवृत्ति है जिसका विषय निश्चित रूप से ज्ञात हो रहा हो, जो बाधित होने वाला न हो तथा पूर्व से ज्ञात न रहा हो।' अतः प्रमाण के द्वारा यथार्थ ज्ञान किया जाता है। साख्यकारिका में प्रत्यक्ष अनुमान, और शब्द निम्न तीन प्रमाणों के द्वारा पच्चीस तत्त्वों की सिद्धि की गई है–

दृष्टमनुमानमादावचनं च सर्वप्रमाणासिद्धत्वात्।
त्रिविधं प्रमाणमिष्टं प्रमेय सिद्धि प्रमाणाद्ध।।

प्रत्यक्ष–प्रत्यक्ष ज्ञान इन्द्रियजन्य होता है अर्थात् इन्द्रिय और पदार्थ के सन्निकर्ष से उत्पन्न ज्ञान प्रत्यक्ष कहलाता है–**'प्रतिविषयाध्यवसायो दृष्टम्'** अर्थात् 'विषय से सम्बद्ध इन्द्रियाश्रित निश्चयात्मक ज्ञान को **प्रत्यक्ष** प्रमाण कहते हैं। **'विषयं विषयं प्रतिवर्तते'** इस व्युत्पत्ति से इन्द्रियां ही प्रति विषय हैं। अतः ज्ञानेन्द्रियाँ विषय देश में जाकर विषयगत अज्ञान को समाप्त करती है तदनन्तर बुद्धि के द्वारा निश्चयात्मक ज्ञान (अध्यवसाय) को उत्पन्न करती है। सभी संशयों के निराकरण के कारण इसका (अध्यवसाय का) प्रयोग कारिका में हुआ है। इसी प्रकार विषय पद के प्रयोग से सभी अविषय=मिथ्या ज्ञान का स्वतः निरास हो जाता है।

'अध्यवसाय' के सम्बन्ध में सांख्य-शास्त्र विज्ञान-भिक्षु एवं वाचस्पति मिश्र के मतों का उल्लेख करता है। विज्ञान-भिक्षु के अनुसार इन्द्रियार्थ-सनिकर्ष में विषय के सम्पर्क में इन्द्रियाँ नहीं आती अपितु बुद्धि का ही इन्द्रियों के माध्यम से विषय से सन्निकर्ष होता है। बुद्धि ही पदार्थ से सम्बन्ध स्थापित करती है। और बुद्धि के द्वारा ही प्रथमक्षण में होने वाला विषय ज्ञान निर्विकल्पक होता है तथा वही द्वितीयक्षण में सविकल्पक हो जाता है। इस प्रकार परस्पर बिम्ब-प्रतिबिम्ब भाव रहता है किन्तु वाचस्पति मिश्र के मत में पुरुष का ही बुद्धि में प्रतिबिम्ब होता है।

अनुमान– अनुमान का लक्षण करते हुए सांख्यकार कहते हैं– **तल्लिङ्ग-लिङ्गीपूर्वकम्**– जहाँ पर लिङ्ग-लिङ्गी या व्याप्य-व्यापक भाव के सम्बन्ध से यथार्थज्ञान उत्पन्न होता है, उसे **अनुमान** प्रमाण कहते हैं।

'लिङ्गयति लीनमर्थं गमयतीति लिङ्गम्' की व्युत्पत्ति से व्याप्य अर्थात् हेतु को लिङ्ग कहते हैं। 'लिङ्गम् अस्ति अस्येति' इस व्युत्पत्ति से लिङ्गी व्यापक अर्थात् साध्य को कहते हैं। अनुमान परोक्ष ज्ञान है जो 'व्याप्ति' में ज्ञान पर आधारित है। **'साहचर्यनियमो व्याप्ति'**= दो वस्तुओं के साहचर्य नियम को व्याप्ति कहते हैं। यथा– **यत्र यत्र धूमस्तत्र तत्र वह्निः**। यह अनुमान तीन प्रकार का होता है– (क) **पूर्ववत्** (ख) **शेषवत्** (ग) **सामान्यतोदृष्ट**। वस्तुतः अनुमान के दो भेद होते हैं–वीत अनुमान एवं अवीत अनुमान। जिसका ज्ञान अन्वय व्याप्ति के द्वारा होता है, उसे वीत अनुमान कहते हैं। इसको केवलान्वयी भी कहते हैं। तथा जिसकी सिद्धि व्यतिरेक के द्वारा होती है उसे अवीत या केवलव्यतिरेकी अनुमान कहते हैं।

वीतानुमान दो प्रकार का होता है– **पूर्ववत्** एवं **सामान्यतोदृष्ट**। जिस सामान्य लक्षण का स्वलक्षण पूर्व में ही देख लिया गया हो और बाद में उसका अनुमान हो अथवा जहाँ पर कारण के द्वारा कार्य का अनुमान हो उसे **'पूर्ववत्'** कहते हैं। यथा–अग्नि का सामान्य लक्षण साधारण रूप से अग्नित्व है तथा स्वलक्षण रसोई की अग्नि। पर्वत पर धूम को देखकर जिस अग्नि का अनुमान होता है उसका साक्षात्कार पूर्व में ही रसोई में हो चुका है। **'सामन्यतोदृष्ट'** अनुमान उसे कहते हैं, जिस अनुमान का विषय सामान्य-वस्तु हो तथा उसका विशिष्ट रूप पूर्व में न देखा गया हो। यथा– इन्द्रियों की सत्ता का अनुमान।

'अवीत-अनुमान' को **'शेषवत्'** कहते हैं। परिशेष के आधार पर किया गया अनुमान 'शेषवत्' कहलाता है। अथवा जहाँ कार्य से कारण का अनुमान किया जाता है। उसे 'शेषवत्' अनुमान कहते हैं। यथा– शब्दगुण है। गुण किसी न किसी द्रव्य विशेष पर आश्रित होता हैं यह पृथ्वी, जल, तेज, वायु का विशेष गुण नहीं हो सकता क्योंकि इनके पृथक्-पृथक् विशेष गुण हैं अतः आकाश के शेष रहने के कारण आकाश का विशेष गुण होगा।

शब्द– आप्त पुरुष के वचन को **शब्द** प्रमाण कहते हैं। आप्त पुरुष उसे कहते हैं जो यथार्थ का ज्ञाता एवं वक्ता हो। आप्त पुरुष के द्वारा कहा गया आप्तवाक्य स्वतः प्रमाण होता है।

सृष्टि-प्रक्रिया

पुरुषस्य दर्शनार्थं कैवल्यार्थं तथा प्रधानस्य।
पङ्ग्वन्धवदुभयोरपि संयोगस्तत्कृतः सर्ग।।

सांख्यदर्शन के अनुसार प्रकृति (जड़) एवं पुरुष (चेतन) के संयोग से ही सृष्टि का प्रारम्भ होता है। सृष्टि का प्रयोजन पुरुष को मोक्ष दिलाना है। प्रकृति भोग्या है तथा पुरुष भोक्ता। भोग्य प्रकृति भोक्ता पुरुष के साथ मिलकर ही कैवल्य के लिए प्रयत्न करती है। दोनों का संयोग अन्धे-लंगड़े के समान है। जिस प्रकार अन्धे और लंगड़े मिलकर स्व कार्य सिद्ध करते हैं उसी प्रकार जड़ (प्रकृति) और चेतन (पुरुष) संयोग करके स्वकार्य (सृष्टि) को प्रारम्भ करते हैं। अतः पुरुष को प्रधान की आवश्यकता रहती है। परन्तु जिज्ञासा होती है इन दोनों के संयोग होने पर भी महद् आदि की सृष्टि किस कारण से हुई? इसका उत्तर यह है कि यह सृष्टि प्रकृति के तथा पुरुष के संयोग के कारण होती है। चूंकि महद् आदि की सृष्टि के बिना भोग या कैवल्य की उत्पत्ति नहीं हो सकती। अतः उक्त संयोग ही महद् आदि सृष्टि का कारण है।

महत्तत्व से अहंकार की उत्पत्ति होती है। अहंकार बुद्धि का परिणाम है। अहंकार से (पंच ज्ञानेन्द्रियाँ, पंच कर्मेन्द्रियाँ, मन तथा पंच तन्मात्राओं) 'तत्त्वों का समूह उत्पन्न होता है। इन सोलह तत्त्वों में से अन्तिम पाँच तन्मात्राओं से पाँच महाभूतों की उत्पत्ति होती है। शब्द तन्मात्रा से आकाश, स्पर्शतन्मात्रा से वायु, रूप तन्मात्रा से तेज, रस तन्मात्रा से जल और गन्धतन्मात्रा से पृथ्वी की उत्पत्ति होती है। सूक्ष्म होने से तन्मात्राएँ अविशेष कहलाती हैं।

तन्मात्राण्यविशेषाः तेभ्यो भूतानि पञ्च पञ्चभ्यः।
एते स्मृता विशेषाः.....।।

पूर्वोत्पन्नमसक्तं नियतं महदादिसूक्ष्मपर्यन्तम्।
संसरति निरुपभोगं भावैरधिवासितं लिङ्गम्।।

यह सूक्ष्म शरीर प्रकृति के द्वारा प्रत्येक पुरुष के लिए पृथक्-पृथक् बनाया जाता है। तथा यह विवेक, ज्ञान तथा प्रलयपर्यन्त बना रहता है। महत् से लेकर सूक्ष्म तक अर्थात् महत्, अहङ्कार, ग्यारह इन्द्रियाँ और पाँच सूक्ष्म तन्मात्राएँ, इनका समूह सूक्ष्म शरीर है जो शान्त, घोर और मूढ़ इन्द्रियों से युक्त होने के कारण 'विशेष' कहलाता है। यह बिना किसी भोग के स्थूल शरीर में रहता है। तथा धर्म, अधर्म, ज्ञान, अज्ञान, वैराग्य, अवैराग्य, ऐश्वर्य, अनैश्वर्य नाम के आठ भागों से युक्त होता हुआ लिंग=महाप्रलय में लय को प्राप्त होने वाला, एक शरीर से दूसरे शरीर में प्रवेश करता है।

प्रत्ययसर्ग